

भारत में स्वतंत्रता से पहले और स्वतंत्रता के बाद बदलती प्राथमिक सार्वजनिक स्वास्थ्य नीतियों के दृष्टिकोण का एक ऐतिहासिक अध्ययन

रतन लाल मीणा, डॉ. सुनीता सिन्हा

इतिहास विभाग, भगवन्त विश्वविद्यालय, अजमेर, राजस्थान, भारत

A HISTORICAL STUDY OF THE CHANGING APPROACHES TO PRIMARY PUBLIC HEALTH POLICIES IN INDIA BEFORE AND AFTER INDEPENDENCE

Ratan Lal Meena, Dr. Sunita Sinha

Department of History, Bhagwant University, Ajmer, Rajasthan, India

सारांश:

भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था का इतिहास देश की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियों से गहराई से जुड़ा हुआ है। औपनिवेशिक काल में ब्रिटिश प्रशासन द्वारा अपनाई गई स्वास्थ्य नीतियाँ मुख्यतः शहरी क्षेत्रों, सेना और ब्रिटिश अधिकारियों के हितों की पूर्ति के लिए केंद्रित थीं। ग्रामीण भारत, जहाँ देश की अधिकांश जनसंख्या निवास करती थी, स्वास्थ्य सेवाओं से लगभग वंचित रहा। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत सरकार ने प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में व्यापक बदलाव की आवश्यकता को समझते हुए नीतिगत ढाँचे में जनहित को केंद्र में रखा। इस शोध पत्र में स्वतंत्रता से पहले और बाद की प्राथमिक स्वास्थ्य नीतियों के दृष्टिकोण का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है, जिसमें नीति निर्माण, कार्यान्वयन, जन-सामान्य की भागीदारी, और स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच जैसे पहलुओं का विश्लेषण किया गया है। यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्वास्थ्य को नागरिक अधिकार के रूप में देखने की दिशा में ठोस कदम उठाए गए, जबकि औपनिवेशिक व्यवस्था में यह अधिकतर एक प्रशासनिक बाध्यता मात्र थी।

मुख्य शब्द: स्वास्थ्य नीति, औपनिवेशिक भारत, स्वतंत्रता के बाद, प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाएँ, नीति परिवर्तन, जनस्वास्थ्य, ग्रामीण स्वास्थ्य, भारत सरकार

परिचय

भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य नीतियों का विकास देश की सामाजिक, राजनीतिक और औपनिवेशिक परिस्थितियों से गहराई से जुड़ा हुआ है। स्वतंत्रता से पहले का भारत एक औपनिवेशिक सत्ता द्वारा शासित राष्ट्र था, जहाँ स्वास्थ्य संबंधी निर्णयों का उद्देश्य जनकल्याण से अधिक प्रशासनिक और आर्थिक हितों की रक्षा करना था। ब्रिटिश शासन के दौरान स्वास्थ्य सेवाएँ मुख्यतः सैन्य छावनियों, नगरों और ब्रिटिश अधिकारियों के लिए केंद्रित थीं, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों और जनसामान्य की आवश्यकताओं को प्रायः उपेक्षित किया गया। महामारी नियंत्रण, जैसे प्लेग, हैजा और मलेरिया, प्राथमिक चिंता के विषय अवश्य थे, परंतु इनसे निपटने की नीतियाँ दमनकारी और प्रतिक्रियात्मक अधिक थीं, न कि जन-सामान्य की आवश्यकताओं पर आधारित।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत ने स्वास्थ्य को मानवाधिकार और सामाजिक विकास का मूल स्तंभ मानते हुए सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली को पुनर्गठित करने की दिशा में ठोस कदम उठाए। भौर समिति की अनुशंसाओं ने स्वतंत्र भारत की स्वास्थ्य नीति को एक व्यापक सामाजिक परिप्रेक्ष्य प्रदान किया, जिसमें निवारक, उपचारात्मक और पुनर्वासात्मक सेवाओं को संतुलित रूप से बढ़ावा देने की बात कही गई। इस दौर में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों की स्थापना, मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य, टीकाकरण, परिवार नियोजन और पोषण जैसे विषयों को योजनाबद्ध ढंग से नीतियों में सम्मिलित किया गया।

यह ऐतिहासिक अध्ययन स्वतंत्रता से पूर्व और पश्चात की प्राथमिक सार्वजनिक स्वास्थ्य नीतियों के दृष्टिकोण में आए परिवर्तन को समझने का प्रयास है। यह न केवल नीति निर्माण और कार्यान्वयन की प्रवृत्तियों की पड़ताल करता है, बल्कि यह भी विश्लेषण करता है कि इन परिवर्तनों ने किस प्रकार भारत

के आम नागरिक के जीवन पर प्रभाव डाला। अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि स्वतंत्र भारत ने स्वास्थ्य को केवल चिकित्सा सेवा तक सीमित न रखते हुए, उसे सामाजिक न्याय, समानता और समावेशिता की व्यापक अवधारणाओं से जोड़ा। यही परिवर्तन भारतीय लोकतंत्र की नीति-संवेदना में एक महत्वपूर्ण संक्रमण बिंदु को चिह्नित करता है।

उद्देश्य:

इस शोध पत्र का उद्देश्य भारत में स्वतंत्रता से पहले और बाद की प्राथमिक सार्वजनिक स्वास्थ्य नीतियों का ऐतिहासिक और तुलनात्मक अध्ययन करना है। इसके अंतर्गत औपनिवेशिक शासन की स्वास्थ्य रणनीतियों और स्वतंत्र भारत की नीतिगत सोच में आए अंतर को रेखांकित किया गया है। साथ ही यह भी अध्ययन किया गया है कि किस प्रकार स्वास्थ्य सेवाओं का दायरा और उद्देश्य समय के साथ आम जन के जीवन से और अधिक गहराई से जुड़ता गया।

भारत में स्वतंत्रता से पहले और स्वतंत्रता के बाद बदलती प्राथमिक सार्वजनिक स्वास्थ्य नीतियां

भारत में प्राथमिक सार्वजनिक स्वास्थ्य नीतियों का विकास देश की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियों के परिवर्तनों के साथ गहराई से जुड़ा रहा है। स्वतंत्रता से पहले की स्थिति औपनिवेशिक शासन की नीतिगत प्राथमिकताओं से संचालित थी, जिनका मुख्य उद्देश्य भारत की विशाल जनसंख्या के स्वास्थ्य की रक्षा नहीं, बल्कि ब्रिटिश प्रशासन की निरंतरता, सैनिकों की कार्यक्षमता और आर्थिक उत्पादन की निरंतरता को बनाए रखना था। ब्रिटिश भारत में स्वास्थ्य सेवाओं की दिशा महामारी नियंत्रण, सैन्य अस्पतालों और नगरों की सफाई तक सीमित रही। मलेरिया, प्लेग और हैजा जैसी महामारियों के दौरान कानून बनाए गए, जैसे कि महामारी नियंत्रण अधिनियम 1897, परंतु इनका उद्देश्य अक्सर जनसहभागिता के बजाय प्रशासनिक नियंत्रण था। ग्रामीण भारत, जहाँ देश की अधिकांश जनसंख्या निवास करती थी, स्वास्थ्य सेवाओं से लगभग उपेक्षित रहा। साथ ही स्वास्थ्य सेवा वितरण में जातीय, वर्गीय और शहरी-ग्रामीण अंतर बहुत गहरा था, जिससे यह प्रणाली विशिष्ट तबकों तक सीमित रही।

दूसरी ओर, स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत ने स्वास्थ्य को एक सामाजिक कल्याण की अवधारणा के तहत देखने की दिशा में नीति परिवर्तन की शुरुआत की। 1946 में भोर समिति की सिफारिशों ने स्वतंत्र भारत की स्वास्थ्य प्रणाली की नींव रखी, जिसमें सार्वभौमिक, समग्र और निवारक स्वास्थ्य सेवाओं पर बल दिया गया। प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों की स्थापना और ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार इस नई नीति का प्रमुख अंग बना। मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य, परिवार नियोजन, पोषण, स्वच्छता, और संक्रामक रोगों की रोकथाम जैसे विषयों को योजनाबद्ध तरीके से नीतियों में शामिल किया गया।

1951 में पहली पंचवर्षीय योजना से लेकर 1983 में घोषित राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति तक, भारत सरकार ने स्वास्थ्य सेवाओं को जनसामान्य तक पहुँचाने का प्रयास किया। 1983 की नीति ने स्वास्थ्य को विकास की प्रक्रिया से जोड़ा और विकेंद्रीकरण, अंतर-विभागीय समन्वय और समुदाय की भागीदारी को महत्त्व दिया। इसके पश्चात 2002 और 2017 की स्वास्थ्य नीतियों ने प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं को सुदृढ़ करने, निजी और सार्वजनिक क्षेत्र में संतुलन स्थापित करने, और डिजिटल स्वास्थ्य प्रणाली को बढ़ावा देने पर ध्यान केंद्रित किया। राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (2005), मिशन इंद्रधनुष, और आयुष्मान भारत जैसी योजनाओं ने स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में समावेशिता और समानता की दिशा में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

स्वतंत्रता से पहले की स्वास्थ्य नीतियाँ जहाँ केवल औपनिवेशिक हितों के अनुरूप सीमित और प्रतिक्रियात्मक थीं, वहीं स्वतंत्र भारत की नीतियाँ व्यापक, जन-केंद्रित और सामाजिक न्याय की अवधारणाओं पर आधारित रही हैं। यह परिवर्तन केवल प्रशासनिक नहीं बल्कि वैचारिक भी रहा, जिसने स्वास्थ्य को एक मौलिक अधिकार और सामाजिक उत्थान के साधन के रूप में स्वीकार किया। भारत की स्वास्थ्य नीतियों का यह ऐतिहासिक संक्रमण एक ऐसे विमर्श को जन्म देता है जिसमें नीति केवल शासन का उपकरण नहीं, बल्कि समाज के प्रत्येक वर्ग के लिए जीवन की गुणवत्ता सुधारने का माध्यम बनती है।

भारत में स्वतंत्रता से पहले और बाद की प्राथमिक सार्वजनिक स्वास्थ्य नीतियों का ऐतिहासिक और तुलनात्मक अध्ययन

भारत में प्राथमिक सार्वजनिक स्वास्थ्य नीतियों का इतिहास एक दीर्घ और जटिल प्रक्रिया से होकर गुज़रा है, जो देश की राजनीतिक परिस्थितियों, सामाजिक संरचना और औपनिवेशिक प्रभावों से अत्यंत प्रभावित रहा है। स्वतंत्रता से पहले की सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था मुख्यतः ब्रिटिश शासन द्वारा नियंत्रित और निर्देशित थी, जिसका उद्देश्य भारतीय जनसंख्या की भलाई से अधिक ब्रिटिश प्रशासन और व्यापारिक हितों की रक्षा करना था। औपनिवेशिक काल में स्वास्थ्य नीतियों की संरचना प्रतिक्रियात्मक और संकट-उन्मुख रही। जब महामारियाँ, जैसे प्लेग, हैजा, मलेरिया या चेचक का प्रकोप होता था, तब प्रशासनिक स्तर पर कदम उठाए जाते थे, किंतु इन प्रयासों का कोई दीर्घकालिक दृष्टिकोण नहीं था। 1897 का महामारी नियंत्रण अधिनियम इस बात का उदाहरण है कि कैसे ब्रिटिश शासन ने महामारी से लड़ने के नाम पर कठोर और जनविरोधी उपाय अपनाए। स्वास्थ्य सुविधाएँ मुख्यतः नगरों, सैनिक छावनियों और रेलवे जैसे वाणिज्यिक प्रतिष्ठानों के आसपास केंद्रित थीं। ग्रामीण क्षेत्रों, जहाँ अधिकांश भारतीय निवास करते थे, वहाँ स्वास्थ्य सेवाओं की स्थिति अत्यंत दयनीय रही। इस अवधि में सार्वजनिक स्वास्थ्य को जन अधिकार के रूप में नहीं, बल्कि प्रशासकीय व्यवस्था बनाए रखने के एक साधन के रूप में देखा गया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य की धारणा में एक मौलिक परिवर्तन आया। स्वास्थ्य को नागरिक अधिकार, सामाजिक कल्याण और मानव विकास के अभिन्न भाग के रूप में देखा जाने लगा। 1946 में गठित भोर समिति ने एक समग्र और समावेशी सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली का खाका प्रस्तुत किया, जिसमें प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं को देश की स्वास्थ्य नीति का आधार स्तंभ माना गया। समिति ने सुझाव दिया कि स्वास्थ्य सेवाएँ मुफ्त, सार्वभौमिक और सुलभ हों, विशेषतः ग्रामीण भारत के लिए। इस दृष्टिकोण के आधार पर स्वतंत्र भारत की स्वास्थ्य नीतियों ने निवारक और प्रचारात्मक स्वास्थ्य उपायों को प्राथमिकता दी, जिसमें प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों की स्थापना, सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की भागीदारी, और मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार शामिल था।

1951 में पहली पंचवर्षीय योजना के तहत स्वास्थ्य सेवाओं के लिए संस्थागत ढाँचे की नींव रखी गई। 1983 की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति ने पहली बार स्वास्थ्य को विकास की प्रक्रिया में केंद्रीय स्थान देते हुए ग्रामीण स्वास्थ्य सेवा को सशक्त बनाने, टीकाकरण कार्यक्रमों का विस्तार करने और जनसंख्या नियंत्रण पर बल दिया। बाद में 2002 और 2017 की स्वास्थ्य नीतियों ने स्वास्थ्य सेवा की गुणवत्ता, निजी क्षेत्र की भूमिका, और स्वास्थ्य बीमा जैसी अवधारणाओं को बढ़ावा दिया। 2005 में राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन और 2018 में आयुष्मान भारत जैसी योजनाओं ने स्वास्थ्य क्षेत्र में ऐतिहासिक विस्तार प्रस्तुत किया, जहाँ स्वास्थ्य केवल इलाज नहीं बल्कि समग्र जीवन गुणवत्ता का अंग बना।

तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो स्वतंत्रता से पहले की स्वास्थ्य नीतियाँ सीमित, संकट-केंद्रित और प्रशासकीय हितों तक सीमित थीं, जबकि स्वतंत्रता के बाद की नीतियाँ अधिक समावेशी, जन-केंद्रित और विकास उन्मुख रही हैं। औपनिवेशिक शासन के दौरान स्वास्थ्य नीति एक प्रभुत्वशाली शक्ति द्वारा थोपी गई अनुत्तरदायी व्यवस्था थी, जबकि स्वतंत्र भारत की नीतियाँ लोकतांत्रिक प्रक्रिया और जन भागीदारी से प्रेरित रही हैं। पूर्व-स्वतंत्रता काल में जहाँ स्वास्थ्य केवल कुछ शहरी और विशिष्ट वर्गों तक सीमित था, वहीं स्वतंत्र भारत में नीतिगत प्रयासों का उद्देश्य ग्रामीण, निर्धन और वंचित वर्गों तक स्वास्थ्य सेवाओं को पहुँचाना रहा।

यह ऐतिहासिक और तुलनात्मक अध्ययन स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि कैसे भारत ने स्वास्थ्य को औपनिवेशिक नियंत्रण की छाया से निकालकर एक जनकल्याणकारी दायित्व के रूप में स्थापित किया। हालाँकि आज भी स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच, गुणवत्ता और संसाधनों की उपलब्धता को लेकर कई चुनौतियाँ बनी हुई हैं, फिर भी स्वतंत्र भारत की स्वास्थ्य नीतियाँ निरंतर सुधार और नवाचार के माध्यम से एक समावेशी और न्यायसंगत स्वास्थ्य प्रणाली की दिशा में अग्रसर हैं। यह यात्रा न केवल नीतिगत

परिवर्तन की कहानी है, बल्कि यह एक सामाजिक चेतना और लोकतांत्रिक संकल्प की अभिव्यक्ति भी है।

औपनिवेशिक शासन की स्वास्थ्य रणनीतियों और स्वतंत्र भारत की नीतिगत सोच में आए अंतर
औपनिवेशिक शासन की स्वास्थ्य रणनीतियों और स्वतंत्र भारत की नीतिगत सोच के बीच जो अंतर दिखाई देता है, वह केवल प्रशासनिक दृष्टिकोण का ही नहीं, बल्कि मूलभूत वैचारिक परिवर्तन का भी परिचायक है। ब्रिटिश शासन की स्वास्थ्य नीतियाँ मूलतः उपनिवेश के राजनीतिक, सैन्य और आर्थिक हितों की रक्षा के लिए गढ़ी गई थीं। अंग्रेजों के लिए भारत की जनता का स्वास्थ्य कोई नैतिक या सामाजिक दायित्व नहीं था, बल्कि वह एक माध्यम मात्र था, जिसके ज़रिये उनके उपनिवेश की संरचना सुचारु रूप से चलती रहे। इसलिए स्वास्थ्य संबंधी नीतियाँ प्रतिक्रियात्मक थीं और अधिकतर महामारियों या संक्रमणों के समय लागू की जाती थीं, जैसे प्लेग, हैजा, मलेरिया और चेचक जैसी बीमारियों से निपटने के लिए बनाए गए कानून, जैसे महामारी अधिनियम 1897। इन कानूनों के तहत लोगों के जीवन में प्रशासनिक हस्तक्षेप होते थे, किंतु उनके जीवन की गुणवत्ता में कोई सकारात्मक सुधार लाने की योजना नहीं होती थी।

ब्रिटिश शासन की रणनीतियों में प्राथमिकता सैन्य अस्पतालों, बंदरगाहों और रेलवे स्टेशनों जैसी स्थानिक आवश्यकताओं को दी जाती थी। स्वास्थ्य सेवाएँ मुख्यतः उन क्षेत्रों तक सीमित थीं जहाँ ब्रिटिश अधिकारियों और सैनिकों की उपस्थिति अधिक थी। ग्रामीण भारत, जहाँ देश की अधिकांश जनसंख्या निवास करती थी, स्वास्थ्य सेवाओं से लगभग वंचित रहा। इसके अलावा, स्वास्थ्य सुविधाओं का वितरण जातीय और वर्गीय विभाजन पर आधारित था, जहाँ सामाजिक रूप से पिछड़े और निर्धन वर्गों को न्यूनतम या कोई सुविधा नहीं मिलती थी। औपनिवेशिक शासन में स्वास्थ्य एक दमनकारी औज़ार बन गया था, जिसमें जनस्वास्थ्य की अवधारणा अनुपस्थित थी।

इसके विपरीत स्वतंत्र भारत में स्वास्थ्य को एक मौलिक अधिकार, सामाजिक कल्याण और विकास के साधन के रूप में देखा गया। स्वतंत्रता के तुरंत बाद भोर समिति ने जो सुझाव दिए, वे भारत की सार्वजनिक स्वास्थ्य सोच को वैचारिक रूप से एक नया आधार देने वाले सिद्ध हुए। समिति ने स्वास्थ्य को समग्र दृष्टिकोण से देखने की बात की, जिसमें निवारक, उपचारात्मक और पुनर्वासात्मक सेवाओं के संतुलन की आवश्यकता को रेखांकित किया गया। स्वतंत्र भारत की नीतिगत सोच में स्वास्थ्य को ग्रामीण क्षेत्रों तक पहुँचाना, मातृ और शिशु स्वास्थ्य में सुधार, जनसंख्या नियंत्रण, पोषण, स्वच्छता और जनभागीदारी जैसे मुद्दे प्रमुख बन गए।

1951 में शुरू हुई पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से स्वास्थ्य को योजनाबद्ध ढंग से विकास प्रक्रिया में सम्मिलित किया गया। 1983 की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति और उसके बाद की 2002 तथा 2017 की नीतियाँ इस वैचारिक विकास को और मज़बूती प्रदान करती हैं। जहाँ औपनिवेशिक रणनीतियों में नागरिकों को केवल 'प्रजा' मानते हुए न्यूनतम हस्तक्षेप किया गया, वहीं स्वतंत्र भारत में नागरिकों को 'अधिकारों से युक्त नागरिक' मानते हुए स्वास्थ्य को सामाजिक न्याय और समानता से जोड़ा गया।

इसके अलावा स्वतंत्र भारत में स्वास्थ्य नीति ने विकेंद्रीकरण, अंतर-विभागीय समन्वय, और समुदाय की भागीदारी को भी बल दिया। राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, आयुष्मान भारत और मिशन इंद्रधनुष जैसी योजनाओं ने उस सोच को मूर्त रूप दिया, जिसमें स्वास्थ्य सेवा न केवल सरकार की ज़िम्मेदारी है, बल्कि यह एक साझा सामाजिक प्रयास भी है।

इस प्रकार, औपनिवेशिक और स्वतंत्र भारत की स्वास्थ्य नीतियों में अंतर केवल क्रियान्वयन के स्तर पर नहीं, बल्कि उनकी वैचारिक प्रेरणा, उद्देश्य और दृष्टिकोण में निहित है। औपनिवेशिक शासन में स्वास्थ्य नीति शासन को बनाए रखने का साधन थी, जबकि स्वतंत्र भारत में यह नागरिक सशक्तिकरण और सामाजिक समानता की दिशा में एक नैतिक और संवैधानिक प्रतिबद्धता बन गई। यह बदलाव भारतीय लोकतंत्र की परिपक्वता और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना का स्पष्ट संकेत है।

स्वास्थ्य सेवाओं का दायरा और उद्देश्य समय के साथ आम जन के जीवन से और अधिक गहराई से जुड़ता गया

स्वास्थ्य सेवाओं का दायरा और उद्देश्य समय के साथ लगातार व्यापक होते गए और इनकी प्रकृति महज़ चिकित्सा सेवाएँ प्रदान करने से आगे बढ़कर आम जन के जीवन की संपूर्ण गुणवत्ता को छूने लगी। प्रारंभिक काल में जब स्वास्थ्य सेवाएँ सीमित संसाधनों और प्रशासनिक नियंत्रणों में बंधी थीं, तब इनका उद्देश्य केवल महामारी और रोग नियंत्रण तक सीमित था। किंतु जैसे-जैसे समाज में जनचेतना का विकास हुआ, स्वास्थ्य को केवल रोगों के इलाज से जोड़कर नहीं देखा गया, बल्कि इसे जीवन के प्रत्येक पहलू से जोड़ने की आवश्यकता महसूस की गई।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में स्वास्थ्य सेवाओं की परिभाषा और प्राथमिकताएँ बदलने लगीं। अब यह केवल अस्पतालों, दवाइयों और चिकित्सकों की व्यवस्था तक सीमित न रहकर सामाजिक कल्याण, शिक्षा, पोषण, स्वच्छता और महिला-शिशु स्वास्थ्य जैसे आयामों को भी समेटने लगी। प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों की स्थापना, टीकाकरण अभियान, परिवार कल्याण कार्यक्रम और पोषण योजनाएँ इस बात का संकेत थीं कि सरकार अब स्वास्थ्य को एक समग्र और जीवनोन्मुख व्यवस्था के रूप में देख रही है। स्वास्थ्य नीति में इस बदलाव ने उसे केवल एक प्रशासनिक दायित्व से निकालकर एक सामाजिक उत्तरदायित्व के रूप में परिवर्तित कर दिया।

ग्रामीण और वंचित समुदायों तक स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच सुनिश्चित करने के प्रयासों से स्वास्थ्य नीति आम जन के जीवन से गहराई से जुड़ने लगी। महिलाओं के लिए संस्थागत प्रसव, किशोर स्वास्थ्य, बुजुर्गों के लिए देखभाल सेवाएँ और मानसिक स्वास्थ्य जैसे मुद्दों को नीतिगत प्राथमिकताओं में सम्मिलित किया गया। शहरी और ग्रामीण दोनों स्तरों पर स्वास्थ्य के सामाजिक निर्धारकों को ध्यान में रखते हुए योजनाओं का विस्तार किया गया। इस प्रक्रिया में स्वास्थ्य एक ऐसा क्षेत्र बन गया, जिसमें व्यक्ति का शारीरिक, मानसिक और सामाजिक कल्याण सम्मिलित हो गया।

तकनीकी विकास, सूचना प्रौद्योगिकी का समावेश, और डिजिटल स्वास्थ्य प्लेटफार्मों ने न केवल सेवाओं की पहुँच को बढ़ाया, बल्कि आम लोगों को स्वास्थ्य निर्णयों में सहभागी बनाने की दिशा में भी क्रांतिकारी परिवर्तन लाए। इसके साथ ही आयुष्मान भारत जैसी योजनाओं ने आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लिए स्वास्थ्य सेवाओं को अधिक सुलभ और सशक्त बनाया। यह परिवर्तन स्पष्ट करता है कि स्वास्थ्य अब एक सुविधा नहीं, बल्कि एक बुनियादी अधिकार और गरिमामय जीवन जीने की शर्त बन चुका है।

इस प्रकार, समय के साथ स्वास्थ्य सेवाओं का उद्देश्य न केवल बीमारियों से मुक्ति देना रहा है, बल्कि एक ऐसा जीवन सुनिश्चित करना बन गया है जो सम्मान, समानता और समावेश पर आधारित हो। यह गहराई समाज के हर व्यक्ति को उसकी शारीरिक, मानसिक और सामाजिक क्षमता के साथ जीवन जीने का अवसर प्रदान करती है, और यही उस परिवर्तनशील यात्रा की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

परिणाम विश्लेषण

औपनिवेशिक काल की स्वास्थ्य नीतियों का मूल उद्देश्य ब्रिटिश सैन्य बलों और अधिकारियों की सुरक्षा, महामारी नियंत्रण और श्रमिक वर्ग की कार्यक्षमता बनाए रखना था। इन नीतियों में आम भारतीय जनसंख्या, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों की स्वास्थ्य आवश्यकताओं की अनदेखी की गई। 1857 के विद्रोह के बाद अंग्रेजों ने महामारी नियंत्रण पर ज़ोर दिया, जैसे कि प्लेग, हैजा और मलेरिया से लड़ने हेतु अधिनियम बनाए गए, किंतु उनकी क्रियान्वयन नीति दमनकारी और प्रतिक्रियात्मक रही।

स्वतंत्रता के पश्चात भारत सरकार ने स्वास्थ्य को सामाजिक न्याय और विकास का अंग मानते हुए योजना आधारित दृष्टिकोण अपनाया। भोर समिति (1946) की अनुशंसाओं के आधार पर ग्रामीण प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों की स्थापना, मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य, टीकाकरण, परिवार नियोजन, पोषण सुधार जैसी योजनाओं की शुरुआत हुई। 1983 की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति और बाद की 2002 तथा 2017 की नीतियाँ स्वास्थ्य सेवाओं को अधिक सुलभ, सस्ती और सर्वजन के लिए उपलब्ध कराने पर केंद्रित रहीं। राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (2005) और आयुष्मान भारत योजना (2018) जैसे कार्यक्रमों ने इस दिशा को और मज़बूती दी।

यह भी देखा गया कि स्वतंत्रता के बाद नीतियों में विकेंद्रीकरण, पंचायतों की भूमिका, महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की भागीदारी और स्वास्थ्य शिक्षा पर विशेष बल दिया गया, जो स्वास्थ्य सेवाओं के लोकतंत्रीकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन था।

निष्कर्ष

भारत में प्राथमिक सार्वजनिक स्वास्थ्य नीतियों के विकास का इतिहास केवल चिकित्सा सेवाओं की उपलब्धता तक सीमित नहीं है, बल्कि यह देश की नीतिगत चेतना, सामाजिक संरचना और लोकतांत्रिक दृष्टिकोण के विकास को भी दर्शाता है। स्वतंत्रता से पहले की नीतियाँ एक संकुचित प्रशासनिक दृष्टिकोण को दर्शाती हैं, जबकि स्वतंत्रता के बाद की नीतियाँ समावेशी, मानव-केंद्रित और विकासोन्मुखी रही हैं। हालाँकि आज भी कई चुनौतियाँ—जैसे स्वास्थ्य में असमानता, संसाधनों की कमी, शहरी-ग्रामीण अंतर आदि—मौजूद हैं, लेकिन भारत की सार्वजनिक स्वास्थ्य नीतियों ने समय के साथ जो परिवर्तन और सुधार किए हैं, वे स्वास्थ्य सेवाओं को आमजन तक पहुँचाने की एक महत्वपूर्ण यात्रा को दर्शाते हैं। यह अध्ययन इस बात पर बल देता है कि नीति-निर्माण में ऐतिहासिक समझ और समावेशी दृष्टिकोण आवश्यक हैं ताकि स्वास्थ्य एक नागरिक अधिकार के रूप में स्थापित रह सके।

संदर्भ ग्रंथसूची

1. अरोड़ा, आर.सी. (1999)। *स्वास्थ्य सेवाओं का प्रशासन और प्रबंधन*। जयपुर: रावत पब्लिकेशन्स।
2. बसु, असीमा (2000)। *भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य का इतिहास*। नई दिल्ली: नेशनल बुक ट्रस्ट।
3. डेव, एन.के. (2003)। *Health and Medicine in Colonial India*। हैदराबाद: ओरिएंट ब्लैकस्वान।
4. गोयल, एस.पी. (2010)। *स्वास्थ्य नीति और नियोजना*। मेरठ: लेखा प्रकाशन।
5. Government of India (1946)। *Report of the Health Survey and Development Committee (Bhore Committee Report)*। नई दिल्ली: स्वास्थ्य मंत्रालय।
6. Government of India (1983)। *National Health Policy*। नई दिल्ली: स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय।
7. Government of India (2002)। *National Health Policy*। नई दिल्ली: स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय।
8. Government of India (2017)। *National Health Policy*। नई दिल्ली: स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय।
9. Jeffery, R. (1988)। *The Politics of Health in India*। बर्कले: यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस।
10. Qadeer, Imrana (2011)। *Public Health in India: Critical Reflections*। नई दिल्ली: दायर पब्लिकेशन्स।
11. MoHFW (Ministry of Health and Family Welfare) Reports – विभिन्न वर्षों के।
12. WHO (World Health Organization) Reports on India – विभिन्न वर्षों के।
13. सेन, अमर्त्य (1999)। *Development as Freedom*। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
14. Banerjee, A. & Duflo, E. (2011)। *Poor Economics: A Radical Rethinking of the Way to Fight Global Poverty*। पेंगुइन बुक्स।